अनुबोधन, खण्ड 1, अंक 4, दिसम्बर 2025, पृष्ठ 93–99
ISSN: 3049-4184 (प्रिन्ट), 3108-1185 (ऑनलाइन)
प्रकाशित: 31 दिसम्बर 2025
जर्नल वेबसाइट: https://anubodhan.org
DOI: 10.65885/anubodhan.v1n4.2025.034

संस्कृत साहित्य में गङ्गा का स्वरूप

डॉ0 सविता शर्मा*

संस्कृत भाषा भारतीयों की प्राणभूत भाषा है। संस्कृत भाषा में ही उनका मनन, चिन्तन गवेषण और अनुभूति समन्वित हैं। वैदिक काल से लेकर आज तक इसकी अक्षुण्ण धारा प्रवाहित हो रही है। भारतीयों ने इस भाषा को अशुद्धि, अपभ्रंश, अपषब्द और भाषागत दोष से पृथक एवं परिष्कृत रखा। संस्कृत को देवभाषा, देववाणी, गीर्वाणवाणी आदि नामों से व्यवह्त किया जाता है। **''विद्वासों हि देवा''** विद्वानों को देवता कहते है, इस आधार पर संस्कृत को देवभाषा कहा जाता है। जो भव्य विचारों का रूचिर दर्पण है।

सृष्टि की उत्पत्ति में पञ्चमहाभूतों का विशेष महत्व है। ये पांच अवयव पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश है। जल हमारी भौतिक सम्पदाओं में एक महत्वपूर्ण अवयव है। जल की सूक्ष्मता, मृदुलता, स्निग्धता, गुरूता, स्वच्छता, शीतलता इत्यादि गुणों की पवित्रता एवं अस्तित्व की रक्षा करना हमारा नैतिक कर्तव्य है। भारतवर्ष में सभी द्वारा स्वीकार्य गङ्गाजल की सर्वहितकारिता एवं अनंतकाल से वैदिक ऋषियों मनीषियों आदि की ज्ञान प्रेरणास्रोत के रूप में विद्यमान है। छान्दोय–उपनिषद में कहा गया है–

''स योऽपि ब्रहतसमुपास्ते अप्नेति सर्वान् कामान्''[1]

गङ्गा शब्द स्त्री वाचक– 'गम् गतो + गन् गम्यद्योः'' गम्ल् गतां धातु से गन् प्रत्यय। गन् गम्यद्योः। तथा स्त्रीवाचक टाप् प्रत्यय जोड़कर गङ्गा शब्द निष्पादित हुआ है जिसका अर्थ है ''निरन्तर संचरणशील''।

गमयति प्रापयति ज्ञापयति वा भगवत्यद या शक्तिः।
यद्वा गम्यते प्राप्यते मोक्षाधिभियां''। सा गङ्गा।

इसका तात्पर्य है कि निस्तर संचरणशील गङ्गा वह है, जो कि परब्रह्म परमेश्वर की सर्वशक्तिमान सत्ता का ज्ञान कराते हुए अथवा मोक्ष के रास्ते को प्रशस्त करते हुए उस परम–शक्तिमयी सत्ता तक पहुंचा दे

*प्राच्य संस्कृत विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

वही गङ्गा है।

संस्कृत शब्द कोष और अमर कोष में गङ्गा के आठ पर्यायों का उल्लेख प्राप्त होता है–

गङ्गा, विष्णुपदी, जह्नुतनया, सुरनिम्नगा
भागीरथी, त्रिपथगा, त्रिस्तोता भीष्मसूरपि।

हलायुधकोषाकार में –

''भागीरथी सुरसरिद् विष्णुपदी जाह्नवी तथा गङ्गा।
मन्दाकिनी त्रिपथगा सरिद्वरा त्रिदशदीर्घिका प्रोक्ता।।''[2]

गङ्गा का उद्भव स्थान, जो गोमुख और गङ्गोत्री का पर्याय है। गङ्गा केवल एक नदी मात्र नहीं है अपितु ये जल का प्रतीक भी है। जल तो जीवन का मूलाधार है जिसके वाहनरूप में समरसता परिलक्षित होती है। भगवती गङ्गा का भौतिक स्वरूप भी बड़ा अनोखा रहा है। ये अनेक साम्राज्यों एवं सभ्याताओं के उत्थान–पतन की साक्षी रही है। भारतवर्ष की जननी के रूप में यह नदी विशाल मैदान में हमारी संस्कृति को आज भी सजोए रखा है। गङ्गा नदी के तट पर ऋषि–मुनियों के तपःस्थल रहे हैं जिन्होंने जनसामान्य के अन्तःकरण में विश्वबन्धुत्व की भावना जागृत की और अपने ज्ञानप्रभा से विश्व को आलोकित किया। महाभारत में स्पष्ट कहा गया है–

''प्रनाति कीर्तिता पापं दृष्ट्वा भद्रं प्रयच्छति।
अवगढ़ा च पीता च प्रनाति सप्तम् कुलम्।।''[3]

गङ्गा अपना नामोच्चारण करने वाले व्यक्ति के पापों का नाश करती है, दर्शन करने वालों का कल्याण करती है तथा स्नान और पान करने वालों की सात पीढ़ियों को भी आवागमन के बन्धन से मुक्त एवं पवित्र कर देती है।

गङ्गा माहात्म्य का प्रसंग अनेक ग्रंथों में प्राप्त होता है। गङ्गासहस्रनामस्तोत्र में कहा गया है कि विश्व में प्रवाहित होने वाली अनेक नदियां और सरोवर है, इनसे सम्बधित कितने ही तीर्थ विद्यमान है ये प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से फलजनक एवं महिमामण्डित भी है लेकिन वे गङ्गा के कोट्यंश भी नहीं है। गङ्गा का जल तो अमृत है, जिसके द्वारा समस्त दुःखदैन्य, सन्ताप, पापादि का पर्यावसान हो जाता है।

महाभारत के वनपर्व में प्राप्त होता है गङ्गा के सदृश कोई दूसरा नहीं है यही सभी तीर्थ, तपोवन और सिद्धिक्षेत्र है। सम्भवतः इसी कारण यह माना गया है कि गङ्गा की महिमा का कीर्तन, दर्शन, स्पर्शन, पान और स्नान करने से पुण्य की प्राप्ति होती है।

हमारी सभ्यता एवं संस्कृति में गङ्गा इस प्रकार रच–बस गयी हैं जिसका साक्षी हमारा प्राचीन साहित्य हैं। हरिद्वार, प्रयाग का कुम्भ मेला इस बात का साक्षी है कि गङ्गाजल के दर्शन, मज्जन और पान के प्रति जनमानस के मन में अटूट–विश्वास है। वर्तमान वैज्ञानिक परिवेश विभिन्न परीक्षणों के माध्यम से गङ्गाजल के प्रदूषित होने तथा स्नान–पान के वर्जन का उद्घोष करें परन्तु हमारी आस्था पर इसका कोई साकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ता है।

जनमानस की आस्था में **''गङ्गे! तव दर्शनात् मुक्तिः''** का उद् घोष मात्र ही उसके माहात्म्य को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है।

सर्वतीर्थेषु यत्पुण्यं सर्वेष्वायतनेषु च।
तत्फल लभते शीघ्रं गङ्गास्नानात्र संशयः।।

वर्तमान परिवेश में स्नान का वैज्ञानिक अर्थ प्रयोग करते है जिसके मूल यह है कि स्नान से आपततः शरीर का मल छूट जाता है, शरीर में स्फूर्ति एवं चेतना आ जाती है, परन्तु आध्यात्मिक संदर्भ में शारीरिक स्नान से आत्मा निर्मल हो उठे, अन्तःकरण प्रकाशपुञ्ज से भर जाए तथा वासनाओं के तन्तु क्षीण हो जाए तो उसे आत्मिक स्नान या मानस स्नान की संज्ञा दी जाती है। ऋग्वेद के पुरूष सुक्त में भी ऐसे ही मानस यज्ञ के विषय में बताया गया है–

''यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्त।
वसन्तो स्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः।[4]

शङ्कराचार्य ने भी अपने स्तोत्रों में ऐसे ही मानस– स्नानों तथा उपचारों का वर्णन किया हैं। इस प्रकार से स्थूल से सूक्ष्म तक पहुंचने की प्रक्रिया ही वास्तव में साधना की पराकाष्ठा है।

जिसे प्राप्त कर मनुष्य आत्मिक शुद्धि की अनुभूति करने लगता है। बहुत से धर्माचार्यों का ऐसा विश्वास है कि यदि आप गङ्गा स्नान के पूर्व मन में मलिनता रखते है अथवा स्नान के बाद पुनः पापोदय हुआ तो गङ्गा स्नान करने की कोई सार्थकता नहीं रह जाएगी।

गङ्गा स्नान से गात्रशुद्धि, पाप विनाश, परमार्थिक लाभ, यश–कीर्ति इत्यादि के साथ ही साथ मोक्ष लाभ भी प्राप्त होता है आदि कवि बाल्मीकि ने स्पष्ट किया है–

'प्रक्षाल्य गात्र कलि कल्मषपकमाशु।
मोक्षं लभेत् पतति नैव नरो भताब्धौ।''

इसका तात्पर्य है कि गङ्गास्नान के व्यवहारिक एवं परमार्थिक दोनों ही पक्ष स्पष्ट हो जाते हैं। गङ्गा स्नान से शरीर और मन दोनों की शुद्धि होती है। शरीर–शौच तथा मनः शौच। गङ्गा स्नान के अनन्त फल पुराणों तथा अन्यान्य धर्मग्रन्थों में उपलब्ध होते हैं। कुछ लाभ तो आभ्युद यिक होने के कारण मूर्त होते हैं, अपितु उससे भी अधिक लाभ पारलौकिक होने से स्थूल से सूक्ष्म पुण्यों की प्राप्ति से कायिक, वाचिक, एवं मानसिक शुद्धि की प्राप्ति होती है। इन लाभों को शब्दज्ञान अर्थात् शास्त्र प्रमाण से ही अनुभव किया जा सकता है।

गङ्गा जलरूप में बहने वाली **''सदाशिवी पराशक्ति''** है। करणावरूवालय देवाधिदेव शम्भु ने जगत–उद्धार की भावना से इसको प्रवर्तित किया है–

''वस्तुशक्ति विचारोऽयमद्भूतः कोऽपि कुम्भज।
द्रवरूपेण काप्येषा शक्तिः सदाशिवी परा।।
करूणामृत पूर्वेन देवदेवेन शम्भुना।
एषा प्रवर्तिता गङ्गा जगदुद्धरणाय वै।।''[5]

गङ्गा को पापतापतप्त दुःखियों की पीड़ा और ताप को दूर करने वाली गङ्गा के समान कोई नहीं है–

'पापतापाभितप्तानां भूतानामिह जाहन्वो।
पापतापहरा यद्वद् गङ्गा नान्यन्तथा कलौ।।''[6]

गङ्गा की महिमा का कीर्तन करने, अब दर्शन–स्पर्शन–पान और स्नान करने से क्रमशः दशोत्तर गुण–पुण्य की प्राप्ति होती है–

कीर्तनाद् दर्शनात्स्पर्शाद् गङ्गापानाऽवगाहनात्।
दशोत्तर गुणा ज्ञेया पुण्याऽपुण्यर्धिनाशयोः।।[7]

वस्तुतः जो कुछ भी मनुष्यों के पाप–पुण्य रहे हों, भगवती गङ्गा का मानव–तरणी रूप अत्यन्त ही साध्यपूर्ण है। वैसे तो वेदों पुराणों के

समस्त प्रसंग मानवमुक्ति पथ की ही साधना–साध्यता का वर्णन करते हैं–

ज्ञात्वाऽज्ञात्वा च गङ्गायां यः पञ्चत्वमवाप्नुयात्।
अनात्मघाती स्वर्गीययान्नरकान् न स पश्यति।।[8]

जो कोई बिना आत्मकृत्य के ज्ञान से गङ्गा में मृत्यु को प्राप्त करता है, वह नरक का दर्शन ही नहीं करता है और स्वर्ग चला जाता है। गङ्गा ही सर्वतीर्थ है, वही तपोवन है, वही सिद्धिक्षेत्र है और उसी स्वर्ग लोक में गङ्गा का स्थायी निवास है।

कालान्तर में जब भगवती गङ्गा का पृथ्वी पर अवतरण हुआ तो ऋषि मुनियों को **''गङ्गा तव दर्शनात मुक्ति''** की भावना से गङ्गा तट पर स्थित होकर जप–तप करने का पवित्र स्थल प्राप्त हुआ जिससे गङ्गा किनारे अनेक तीर्थ–स्थलों की उद्भूत किया।

जगन्नाथ रत्नाकार कृत गङ्गलहरी में भी गङ्गा के भक्तिपरक, ज्ञानपरक एवं आध्यात्मपरक सन्दर्भों में काव्यात्मक चित्रण किया गया है। कहा जाता है कि पण्डितराज ने अपने प्रायश्चित समय गङ्गालहर नामक काव्यात्मक स्तोत्रों की रचना उन्हीं की गोद में बैठकर किया था यथा–

''भूमिः श्रियोऽमृतमयः शुचिरान्शुगन्ताऽनन्तत्व भृन्त्रिपथगे तव वारिपूरः।
पापानिपञ्च समुहान्ति पुनर्विधातुं पञ्चत्वभाञ्जि किमु पञ्चविधो विभाति।।''[9]

गङ्गाजल अविरल प्रवाहमान एक धारा है, हिमालय से समुद्र को जोड़ने वाला तरल क्रम है। गङ्गा विचार, संस्कृति एवं मिथक है। जल पूजा में जल देवता वरुण से भी अधिक प्रणम्य हैं। प्रकृति पूजा के अनेक परम्पराओं को अपने बीच रखते हुए गङ्गा सुन्दरी भी है।

सप्तसन्धान में गङ्गा को भारत क्षेत्र की वनिता के रूप में चित्रित किया है, जो मनोरंजक और आकर्षक है–

गङ्गाऽनुषगङ्गान्मणिमालभाारिणी सुरद्रुसेकामृतपूरसारणी।
क्षेत्र क्षेमशस्य रस प्रचारिणी सा प्रागुदूढा वनितेव धारिणी।।[10]

गङ्गा–पर्वत पुत्री, शिवप्रिया, अप्सरा, रमणी, शान्तनु की पत्नी तथा भीष्म की माता है। भागीरथ के पूर्वजों और वंशजों की

उद्धारणकर्ता और देवी भी है। इसके ही साथ वे अद्भुत मृत्यु साक्ष्य और मृत्युसाक्षी भी है। जलमय शरीर रूपी गङ्गा धर्मों का खजाना है।

पद्म पुराण में उल्लेख है कि यदि कोई भी व्यक्ति (एक बार गंगा पर जाकर स्नानादि करता है, उसके समस्त पूर्वज पवित्र हो जाते है। यह एक महान–पुण्य है कि वह स्वयं गङ्गा–स्नान करके तर जाता है और अपने पूर्वजों को भी तार देता है। गंगा जी के गुणों का पूर्ण रूप से कोई वर्णन नहीं कर सकता। इनके गुणों की अपार महिमा है, जिनका वर्णन भगवान ब्रह्मा चार मुख होते हुये भी नहीं कर सकते।

एको गच्छति गङ्गा यः पूजन्ते तस्य पुरुषाः।

एतदेव महापूण्यं तरते तारयत्यपि।।

गङ्गाकृत्स्नगुण वक्तु न शक्तश्चतुराननः ।
अतः किञ्चिद्वदाम्यत्र भागीरथ्या द्विजा गुणम्।।[11]

जहां पर बहुत से तीर्थों से संयुक्त होकर महाभागा तपस्विनी गङ्गा जी बहती है, उस क्षेत्र को सिद्धक्षेत्र के समान मानना चाहिये इस पर अन्यथा विचार करना अनुचित है–

यत्र गङ्गा महाभागा बहुतीर्था तपोधना।
सिद्धक्षेत्र हि ताज्ज्ञेयं नात्र कार्या विचारणा।।[12]

गङ्गा जल में स्नान करने से समस्त पापों की शीघ्र ही समाप्ति हो जाती है और अपूर्व पूण्यों की प्राप्ति होती है। भारतीय संस्कृति की विरासत को अक्षुण्ण रखने वाले प्रमुख आधार स्तम्भों से भगवती गङ्गा का महत्वपूर्ण स्थान है। गङ्गा ने भारत के अक्षुण्ण संस्कृति का निर्माण किया है। देवात्मा हिमालय और जीवन्त सागर की ही भाँति गङ्गा का भारतीय संस्कृति के विकास में अप्रतिम योगदान रहा है। गङ्गा विशाल हिमराशि के पिघलाव से फूटी एक सरिता धारा ही नहीं है, यह तो वस्तुतः भगवान विष्णु के चरण कमलों का मकरन्द रस हैं।

भारतीय संस्कृति में गङ्गा पतितोद्वारिणी, दयानिधानभूता, स्नेहशीलता माँ है जो महाराज भागीरथ की कठोर तपस्या से द्रवित होकर उनके कपिलनेत्राग्नि–भस्मीभूत पूर्वजों को मूक्ति देने के लिए पृथ्वी पर अवतरित होती है। गङ्गा भारतीय संस्कृति की चेतना का प्रतीक है और अपने भौतिक स्वरूप से जनकल्याण तो करती है अपने आध्यात्मिक एवं अधिदैविक स्वरूप के द्वारा तो क्षणभर में अनन्त पापों का नाश कर दे वही गङ्गा है। मनुष्य के सामाजिक, आर्थिक एवं

आध्यात्मिक उन्नयन में सुरसरिता के अप्रतिम अवदान को दृष्टिगत रखते हुये मनीषियों ने उन्हें मातृगौरव प्रदान किया।

सन्दर्भः

1. छान्दोग्योपनिषद 7/10/12
2. हलायुध 3.373
3. महाभारत 85/99
4. ऋग्वेद 10.90.6
5. काशीखण्ड 28/84–85
6. काशीखण्ड 28/95
7. काशीखण्ड 100
8. काशीखण्ड 120
9. गङ्गालहरी 1/8
10. सप्तसन्धान 1/17
11. पद्ममहापुराण (सृष्टिखण्ड) 27/17–18
12. मत्स्य पुराण 106/49

Copyright © 2025 Siri Research Foundation. This is an open access article distributed under the Creative Commons Attribution International License (CC BY 4.0).